

“मृदंगाचार्य, तालमणि पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी का पखावज वाद्य के प्रचार एवं प्रसार में योगदान”. (१८९९-१९९९)”

डॉ. ओंकार बाळकृष्ण खिस्ते
अर्थशास्त्र विभाग
श्री संत गजानन महाविद्यालय, खर्डा.
ता. जामखेड, जि. अहमदनगर, ४१३२०४
भ्रमणध्वनी- ९८८१० ६९९०१
dr.khisteob@gmail.com

प्रा. मोहसीन इब्राहीम शेख
हिंदी विभाग
श्री संत गजानन महाविद्यालय, खर्डा.
ता. जामखेड, जि. अहमदनगर, ४१३२०४
भ्रमणध्वनी- ९१७२५ ८५४४७
shaikhmohsin7068@gmail.com

परिचय:-

जिस प्रकार राष्ट्र और धर्म के रक्षकों ने राष्ट्र और अपने धर्म की रक्षा के लिए संघर्ष किया, स्वतंत्रता के यज्ञ में अपने जीवन, परिवार और सब कुछ की आहुती दि, उसी प्रकार उस काल में संगीत उपासाकों ने भी भारतीय संगीत के संवर्धन के लिए बहुत सा त्याग किया। साथ ही उसकी उपासना भी की। कठिन आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों एवं विभिन्न आक्रमणकारियों के समय में संगीत के प्रचार-प्रसार का कार्य संगीत उपासकों द्वारा विभिन्न संप्रदायों, घरानों एवं परम्पराओं के माध्यम से अखंड रूपसे जारी रहाइस वजहसे हम आज भारतीय संगीत अनुभव कर सकते हें। भारतीय संगीत के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखे जानेवाला एक महत्वपूर्ण नाम है ‘**तालमणी, मृदंगाचार्य पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी**’। जिनका जन्म सन १८९९ ई. में स्वतंत्रता-पूर्व युग के दौरान महाराष्ट्र के बीड जिले के नेकनूर गाँव में हुआ था। उनके पिताजी का नाम भगन्नाथ (भगुजी) और माताजी का नाम लक्ष्मीबाई था। गुरुजी, बंकटस्वामीजी महाराज के शिष्य थे। स्वामीजी ने गुरूजी से यह वचन लिया था कि **''जो विद्यार्थी पखावज सीखना चाहते हैं, परन्तु उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, उन्हें नि:स्वार्थ भाव से पखावज प्रचार-प्रसार का कार्य करने हेतु नि:शुल्क ज्ञान देंगे।''** स्वामीजी ने अपने

खर्च पर गुरुजी को शिक्षा दी। शिक्षा के लिए गुरुजी को नाना पानसे घराने के सुप्रसिद्ध पखावज वादक पं. गोविंदराव देवराम बरहानपुरकर के पास भेजा गया। गुरुजी ने पखावज वाद्यों के प्रचार-प्रसार में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। श्री. शाहजीबापू सांगविकर द्वारा लिखित बंकट स्वामीजी महाराज के ओविबंध संत चरित्र के पांचवें अध्याय में गुरुजी का विस्तृत विवरण दिया है। इसमें गुरुजी के जीवन और पखावज सेवा का वर्णन किया गया हैं।

बिज संज्ञा:- बंकटस्वामीजी महाराज, पखावज, नाना पानसे घराना, पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी, संगीत योगदान, ताल की घडी, रसाविष्कार, ।

उद्देश्य:-

१. मृदंगाचार्य, तालमणि पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी के संगीत योगदान की समीक्षा करना।

२. गुरुजी को वर्तमान और भावी पीढ़ियों से अवगत कराना। इससे नव युवकों को प्रेरणा मिलेगी।

सामग्री संकलन एवं अनुसंधान विधियाँ:-

प्रस्तुत शोध लेख प्राथमिक एवं द्वितीयक सामग्रियों पर आधारित है। प्राथमिक तथ्य संकलित करते समय मृदंगाचार्य, तालमणी, पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी के वंशजों और शिष्यों के साक्षात्कार आयोजित किये गए थे। द्वितीयक तथ्यों को एकत्रित करते समय संदर्भ ग्रन्थ एवं वेबसाइटों का सहारा लिया गया है। प्रस्तुत शोध लेख विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। विश्लेषण के लिए श्री. शाहजीबापू सांगविकर द्वारा लिखित बंकट स्वामीजी महाराज के ओविबंध संत चरित्र की मराठी पंक्तियों आधार लिया गया है।

...निनगूर येथे नाथपंथी जोगी थोर । डौर वाजविती निरंतर । पूर्वापार डवरी हे ॥१२७॥ डौर आणि त्रिशूळ हाती। जैसी का वीरभद्र मूर्ती । भागननाथ बुवा म्हणती । कांता सती लक्ष्मीबाई ॥ १२८॥ संसार करिती काही दिन । त्यांना जाहले पुत्ररत्न । त्याचे केले नामकरण । बावननाथ म्हणोनी ॥१२९॥ लाडका बाळ बहु सायास । बाबू म्हणती सर्वही त्यास । **[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]** डवरी गुरुजी नाथ सम्प्रदाय से जुड़े हुए थे। बचपन से ही उनमें सुर, ताल और लय अंतर्निहित थे। उनके पिता श्री. भगुजी (भगन्नाथ) डमरू अर्थात डवर वाद्य बहुत अच्छा बजाते थे। हालाँकि डमरू उपरसे एक साधारण सा दिखने वाला वाद्य यंत्र है, लेकिन इसे बजाने के लिए लय और ताल का ज्ञान होना आवश्यक हैं। डमरू बजाते समय रसाविष्कार और साथ संगत के लिए अपनी कल्पना का आविष्कार तथा नियंत्रण आवश्यक है। इस वाद्ययंत्र को बजाते समय डमरू की रस्सी लय के अनुसार नियंत्रित की जाती है। गुरुजी के पिता श्री भागुजी ये सभी कार्य सहजता से कर लेते थे। यह संगीत परंपरा बाबूराव डवरी गुरुजी को जन्म के साथ प्राप्त हुई थी, इसलिए उन्होंने डमरू वाद्य सहजतासे सिखा। *...लाडका बाळ बहु सायास*

। बाबू म्हणती सर्वही त्यास । पाळण्यात रडता आक्रोश । डौर आसपास वाजविला ॥१३२॥ डौरध्वनी पडता कर्णी । बाबू हासत आनंदोनी । बंद होताचि वाद्यध्वनी । रडे आक्रंदोनी पुनः पुनः ॥१३१।... **[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]** इस वर्णन से यही अवगत होता हें गुरूजी का जन्म ही पखावज के लिए हुआ था। विद्या गुरुजी को पखावज की प्रारंभिक शिक्षा अपने पिता से मिली। कुछ समय बाद गुरुजी को भजन-कीर्तन का शौक हो गया। *...पुढे जातसे भजनासी । मृदंग शिकवावा मजसी भाविक भक्तासी विन- वीत ॥१३२॥ ऐसे जाता काही दिन । ऐकिले स्वामींचे कीर्तन । बाबू वंदित स्वामीजी चरण । कृपादान मज करा ॥१३३॥ स्वामींनी मुमुक्षू देखोन । गेले पंढरीसी घेऊन । गणपत बुवापासी ठेवून । मृदंगवादन शिकविती ॥१३४॥ पुन्हा गेले पुणे नगरासी । मृदंग शिकत बहु सायासी । देखोनी त्या वाद्यासी । आनंद स्वामींसी होतसे ॥१३५॥ त्या गुरूंची सेवा करून । बाबू शिकत मृदंग वादन । सहस्रावधी बोल झाले पठण । हात बहु छान बाबूचा ॥१३९॥ ऐसे घेत घेत शिक्षण । टाकीचे घाय केले सहन । द्वादश वर्षे होता पूर्ण ।...* **[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]** ऐसा कहा जाता है की, बंकटस्वामीजी महाराज ने गुरुजी को डमरू ताल वाद्य बजाते हुए देखा। जैसा कहा जाता है, **'शिशु के पांव पालने में ही दिख जाते हैं'**। स्वामीजी ने गुरुजी से पूछा की, क्या वह पखावज सीखेंगे? उस समय गुरूजी ने बिना कुछ सोचे-समझे हाँ में उत्तर दिया। गुरुजी ने आठ वर्ष की उम्र में पखावज की पढ़ाई शुरू की। *...मध्यप्रदेशामाजी नगर । नाम त्याचे बर्हाणपूर । तेथे गोविंदराव कीर्तनकार । पिता थोर देवराम ॥१३६॥ हे करिती संगीत कीर्तन तबला मृदंग बहु ज्ञान । वादनाचार्य म्हणोन । कीर्ती महान तयांची ॥१३७॥ कीर्ती तयांची ऐकून । स्वामीजी गेले बाबूसी घेऊन । त्यास गुरूपासी ठेवून । खर्च आपण करिती ॥१३८॥...***[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]** स्वामीजी की देखरेख में गुरूजी की आगे की शिक्षा नाना पानसे घराने के सुप्रसिद्ध मृदंगाचार्य पं. गोविंदराव बरहानपुरकर के मार्गदर्शन में हुई। बरहानपुर में उन्होंने गुरु-शिष्य परंपरा से पखावज का ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने अपनी आगे की पढ़ाई मुंबई और कलकत्ता में पूर्ण की। गुरुजी का वादन नाना पानसे घराने और नाथसंप्रदाय का संगम दर्शाता है। गुरुजी के अध्ययन का खर्च बंकटस्वामीजी महाराज ने किया। इससे यह भी पता चलता है कि गुरु और शिष्य का रिश्ता कितना मजबूत था! इस बात के अनेक उदाहरण हैं की, गुरुजी ने अपने शिष्य के प्रति स्वामीजी ने दिया हुए संस्कार को जीवन भर निभाया।

मृदंगाचार्य, तालमणि, पं. स्व. बाबूराव डवरी गुरुजी की एक घटना याद आती है। प्रात:काल का समय था। इस वक्त हर व्यक्ति सुबह के अनुष्ठान, स्नान, पूजापाठ में व्यस्त रहता हैं। निश्चित रूप से गुरुजी भी सुबह की व्यस्तता में थे। उसी समय कुछ सदगृहस्थ गुरुजी के घर पहुँचे, उन्होंने गुरुजी को प्रणाम किया। गुरुजी ने उनके आने का कारण पूछा। उन्होंने कहा कि मेरा बेटा आपसे पखावज सिखाना चाहता है। गुरुजी ने उसे

व्यस्तता के पल में भी बिना सोचे बैठने को कहा। सामने का पखावज लिया और उसी क्षण पखावज की शिक्षा प्रारम्भ कर दी। उस सदगृहस्थ ने गुरुजी से कहा की, आप अपना प्रातःकालीन अनुष्ठान कर लो, हम राह देखते हैं। उस समय शौचालय के लिये बाहर जाना पड़ता था। गुरुजी ने एक पल में कहा, "सबसे पहले शिक्षा जरूरी है", अगर मैं बाहर जाता हूं और वहां मुझे कुछ हो जाता है, तो मैं शिक्षा शुरू नहीं कर पाऊँगा। यह गुरुजी की पखावज की शिक्षा के प्रति लगन, उत्सुकता और छात्रों के प्रति प्रेम को दर्शाता है। **[डॉ. ओंकार खिस्ते, २०२२]**

संसाधनों के अभाव में भी गुरुजी ने जिस प्रकार उस समय पखावज के प्रचार-प्रसार का कार्य किया, वह बहुत ही असामान्य एवं अलौकिक कार्य था। गुरुजी को अपनी प्रसिद्धि की कोई चाह नहीं थी। लक्ष्मी से कोई लगाव नहीं था, लक्ष्मी पीछे और सरस्वती तो उनके साथ थीं! बेहद विपरीत परिस्थितियों में गुरुजी ने संगीत के प्रसार का काम किया। वे हर सप्ताह अलग-अलग गांवों में जाते थे और उस गांव के छात्रों को शिक्षा देते थे। कुछ दिनों के बाद फिर से उसी गाँव का दौरा करके और पिछले अध्ययन का कितना हिस्सा पूरा हो चुका है? इसे परखते तथा क्या कोई समस्या है? इसे जानकर समस्या का निराकरण करते और फिर नए बोलों की शिक्षा देकर के अगले गांव के लिए निकल जाते थे। गुरुजी की पखावज सिखाने की पद्धति अत्यंत शास्त्रीय थी। जिस प्रकार भारतीय शास्त्रीय गायन में **'कंठ संस्कार'** की अवधारणा महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार पखावज वादन में हाथ का संस्कार महत्वपूर्ण है। बोलों की स्पष्टता, माधुर्य, पुड़ी और धूम का संतुलन, लय और लयकारी, ताल का वजन छात्रों को बहुतही आसानी से समझाते थे। इसलिए प्रारंभ से ही छात्रों के हाथों और दिमागों को उचित रूप से विकसित किया जाता था और सहजतासे छात्रों में लय का ज्ञान उचित रूप से निर्माण होता था। गुरुजी ने छात्रों को याद रखने के लिए लयबद्ध लेखन की एक प्रणाली विकसित की और इसे **'ताल की घडी'** के नाम से जाना जाता है। इस ताल घड़ी के आधार पर पखावज पर बोलों को एक ही वजन के साथ, उसी लय में बजाना आसान हो जाता था। पावगुण से लेकर आड़, कुआड़, महाआड़, महाबिआड़ आदि गुण में पखावज बजाना आसान होता था। गुरुजी, नाना पानसे घराने की पखावज शिक्षा पद्धति के अनुसार ताल और विभिन्न रचनाओं को ताल में वे पहले ताली पे बैठाकर और उपरांत सीधे पखावज बजाते थे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया की, पखावज के बोलों की जिस प्रकार पढंत की जाती है, उसी प्रकार बजाया भी जाना चाहिए। एक शिष्य ने गुरुजी से पूछा कि वह **'धा'** कितने प्रकार से बजा सकते हैं? तब गुरुजी ने कहा तुम बताओ, उस समय शिष्य ने उत्तर दिया था कि 'धीमे, मध्यम और तीव्र प्रहार से' गुरुजी को भी इसी उत्तर की अपेक्षा थी! लेकिन उन्होंने इससे भी आगे बढ़कर कहा की, बोलों की रचना ध्यान में लेकर **धा** को तीन और तरीकों से बजाया जा सकता है। गुरुजी ने कहा कि जिस प्रकार रागदारी में स्वरों के कई प्रकार होते हैं

जैसे, 'सा' और 'प' स्थिर स्वर होते हैं जबकि मध्यम शुद्ध और तीव्र और रे, ग, ध और नि शुद्ध और कोमल होते हैं, उसी प्रकार पखावज में धा के प्रकार होते हैं। **'पहला** धा धूम और पुड़ी को संतुलित तरीके से बजाकर बजाया जाता है, दूसरा धा धुम ऊंचे आघात से और पुडि कम आघात से के साथ बजाया जाता है और **तीसरा** धा पुडि के ऊंचे आघात से के साथ और धूम का कम आघात से बजाया जाने वाला धा' है। गुरुजी ने पखावज में शास्त्रीय गायन की अवधारणाओं को ध्यानात्मक रूप में प्रयोग किया। गुरुजी के वादन में संगीत की काकू शैली झलकती थी। जिसने रसाविष्कार को प्रेरित किया। गुरुजी कहते हैं की, रसाविष्कार हर किसी की कल्पना पर निर्भर करता है। **[डॉ. ओंकार खिस्ते, २०२२]** गुरुजी ने पुरे जीवन में बिना किसी प्रलोभन और प्रसिद्धि के पीछे न पड़कर गांव-गांव घूमकर पखावज सिखाने का काम किया। पैठण, पंढरपुर, आलंदी जैसे तीर्थस्थल पर बड़े पैमाने पर छात्रों को पखावज का ज्ञान दे रहे थे। इतना ही नहीं ट्रेन, बस, बैलगाड़ी या ऐसे ही किसी साधन से यात्रा करते समय अपने साथ चलने वाले छात्रों को पखावज का ज्ञान भी देते थे। भजन-कीर्तन के साथ-साथ स्वतंत्र पखावज वादन, ध्रुपद, धमार शास्त्रीय संगीत बड़े ही मधुर ढंग से साथसंगत करते थे। उन्होंने स्वतंत्र पखावज वादन के लिए कई बंदिशों का निर्माण किया, जिनमें छोटे और बड़े परन, उठान, चक्रदार, रेला, गत (सम, काल, खंड का संकेत दिखाते हुवे), ताल के वजन के अनुसार अलग-अलग टुकड़े, मुखड़े आदि शामिल हैं। गुरूजी द्वारा निर्मित शास्त्रीय पखावज वादन के साथ-साथ वारकरी संप्रदाय से संबंधित पखावज की नई रचनाएँ भी आज प्रचार में भी देखने मिलती हैं। ...*॥१४१॥ स्वामीजी कीर्तन करीत । बाबूराव मृदंग वाजवीत । तेणें रंग भरे कीर्तनात । प्रेमे नाचत पांडुरंग ॥ १४२॥ नाटक सिनेमा संगीत गायन त्यांमाजी उत्कृष्ट तबला वादन । ते लोक करिती बहुमान । देऊन शाल श्रीफळ ॥१४३॥ त्रिताल धुमाळी झंपा एका । सरपट आणि मुखडा ठेका । दादरा लय सर्व ताल देखा । मृदंग ऐका गुरुजींचा ॥१४४॥ बाबुराव गुरुजी सांगती लोका । मृदंगवाद्य मजपासी शिका । सेवितो हा रस वाटितो आणिका । घ्यारे होऊ नका रानभरी ॥१४५॥* **[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]**

गुरुजी का स्वभाव न केवल एक शिक्षक के रूप में बल्कि एक इंसान के रूप में भी उत्कृष्ट था। उनका स्वभाव मस्खरा था। इसलिए उनके आस-पास के लोग और उनके शिष्य सीखने का आनंद लेते थे। उनके अच्छे स्वभाव से बड़ी संख्या में शिष्य तैयार हुए। गुरूजी के कार्यों के बारे में महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री. शरदचन्द्रजी पवार ने उन्हें **'मृदंगमहर्षि'** कहकर गौरवान्वित किया था। **[श्री. शशिकांत संभाजीराव कुलथे, २०२१]** सत्तानबे वर्ष की आयु तक उन्होंने पखावज वाद्य के प्रचार प्रसार का कार्य किया। गुरूजी को ह. भ. प. वामनभाऊ महाराज, ह. भ. प. बंकटस्वामी महाराज, ह. भ. प. भीमसिंह महाराज, चाकरवाडी के ह. भ. प. ज्ञानेश्वर माऊली महाराज आदि और

अन्य संतों का सानिध्य प्राप्त हुआ। उनकी संगत में उन्होंने पखावज वादन का कार्य किया। गुरुजी ने प्रासंगिक कीर्तन भी किया। ऐसे महान, निस्वार्थ और प्रसिद्धि से दूर पंडित बाबूराव गुरुजी का निधन एक सौ वर्ष की आयु में १६ अक्तूबर १९९९ को हुआ। मृदंगाचार्य, तालमणी पं. कै. बाबुराव डवरी गुरुजी की समाधि, श्री क्षेत्र आलंदी, महाराष्ट्र यहाँ स्थित है।

गुरुजी का अधिकांश शिष्य महाराष्ट्र और महाराष्ट्र के बाहर देखे जा सकते हैं। *...। सुंदर शिकविले शिष्या लागुनी । किती शिष्य झाले अवनी । कोण गणी तयासी ॥१४६॥* **[श्री शहाजीबापू सांगवीकर, १९९०]** उन्होंने न केवल महाराष्ट्र में बल्कि महाराष्ट्र के बाहर अन्य राज्यों में भी पखावज का प्रचार और प्रसार किया। गुरूजी के बाद उनके पोते श्री. प्यारेलाल चव्हाण डवरी -नेकनूर, श्री. लक्ष्मीकांत चव्हाण-डवरी, श्री केदारनाथ चव्हाण, शिष्य श्री. पांडुरंग महाराज वैद्य-आलंदी, पंडित श्री. तुकाराम भूमकर गुरुजी- पुणे, श्री पांडुरंग दातार, श्री. अभिमन्यु मुले- माजलगांव, श्री. दासोपंत स्वामीजी-आलंदी और अन्य शिष्य इस विरासत को आगे बढ़ा रहे हैं।

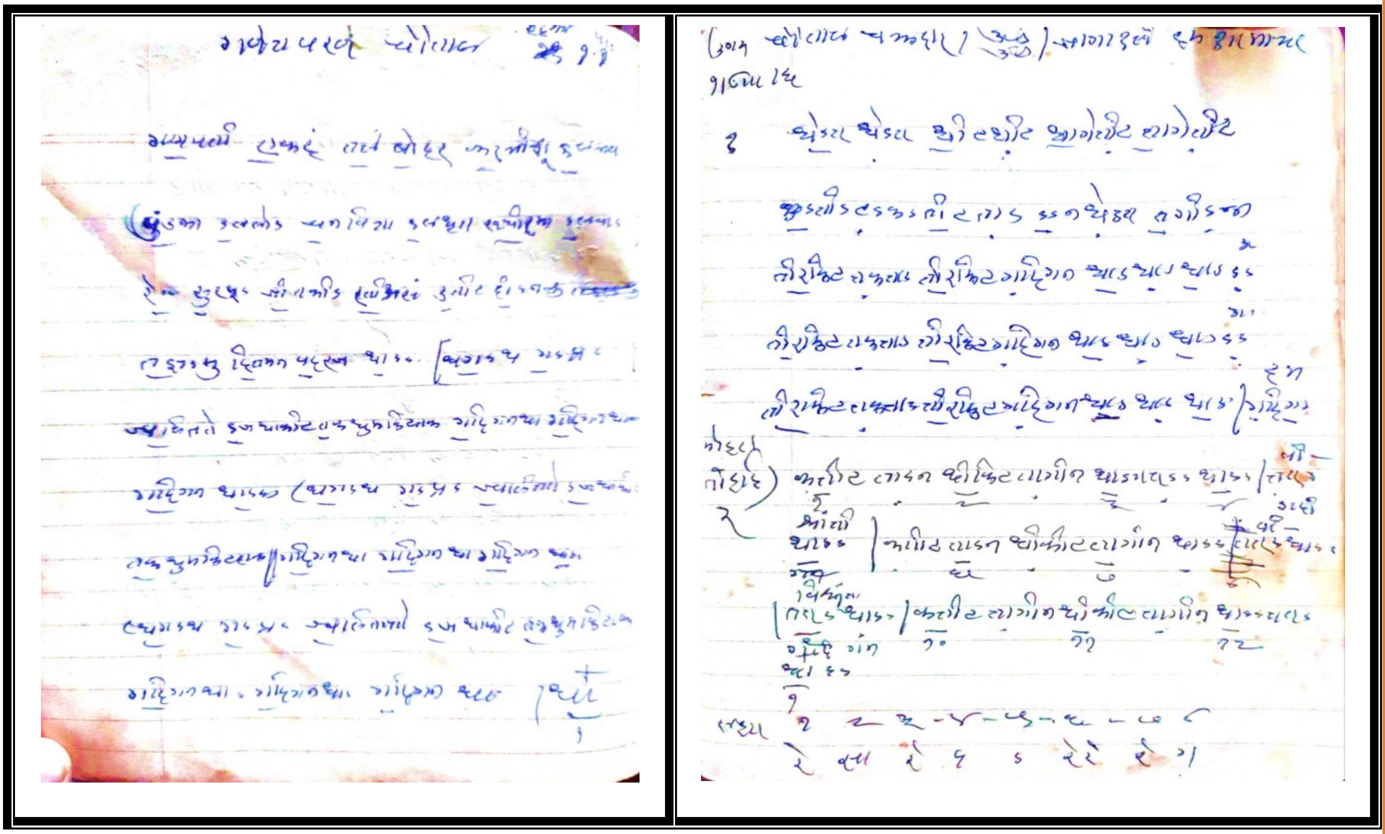
निष्कर्ष:-

गुरुजी का संगीत योगदान अद्वितीय है। गुरुजी ने स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता के बाद के समय में पखावज के प्रचार और प्रसार के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। जिस काल में गुलामी थी, सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियाँ प्रतिकूल थीं, प्रचार एवं प्रसार के साधन बहुत सीमित थे। ऐसी स्थिति में गुरूजी ने अनेक शिष्यों को बड़ी निष्ठा एवं निःस्वार्थ भाव से विद्या प्रदान की। गुरूजी ने, नाना पानसे घराने की परम्परा को बढ़ाने के लिए बहुत परिश्रम किये। निश्चित ही उनका जीवन कार्य आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणादायी होंगा।



मृदंगाचार्य, तालमणी पं. कै. बाबुराव डवरी गुरुजी की समाधि, श्री क्षेत्र आलंदी,महाराष्ट्र

गुरुजी की लिखावट



संदर्भ:-

१. श्री. शहाजीबापू सांगवीकर, *ओवीबद्ध संत चरित्र- श्री बंकट स्वामीजी महाराज,* प्रकाशक, श्री क्षेत्र भगवानगड संस्थाननिवासी, महंत श्री. ह. भ. प. भिमसिंह महाराज, १९९०.

२. डॉ. ओं.बा. खिस्ते, *पखवाज: शास्त्र आणि क्रियात्मक,* ISBN: 978-93-5680-354-1, २०२२

३. श्री. श. सं. कुलथे, *डवरी बाबुराव गुरुजी,* https://marathivishwakosh.org/52975/ २०२१

४. श्री. सं. य. सावंत, *ह .भ .प. मृदंगमहर्षी बाबुराव डवरी यांचे महाराष्ट्राला लाभलेले योगदान बाबुराव डवरी- निनगुर आजचे नेकनुर*. https://manganga.in/?p=917, २०२१

५. डॉ. ओं. बा. खिस्ते, *पं. बाबुराव डवरी गुरुजी:* १८९९-१९९९, https://www.youtube.com/watch?v=dUZqyO5Nb1E, २०२४